विपश्यना पत्रिका संग्रह

(जुलाई १९७४ से जून १९७७ तक)

भाग-२

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना

पत्रिका संग्रह

भाग - २

(जुलाई १९७४ से जून १९७७ तक)

विपश्यनाचार्य श्री सत्यनारायण गोयन्का

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी

विषयानुक्रमणिका

पत्रिका संग्रह भाग २

(जुलाई १९७४ से जून १९७५ तक)

धर्म का सार ३
उद्‌बोधन : शुद्ध धर्म क्या है? ८
उद्‌बोधन : आत्म-संयम १०
'अणुव्रत' १०
धर्म का सही मूल्यांकन १६
उद्‌बोधन : सरल बनें! २३
समता धर्म २५
विपश्यना: विश्वजनीन ३१
विपश्यना: सुख से जीने की एक वैज्ञानिक कला ३९
उद्‌बोधन : मन का संवर ४५
विपश्यना चित्त शुद्धीकरण की साधना ४६
विपश्यना : उद्देश्य, पद्धति और विशेषताएं ५०
सयाजी ऊ बा खिन : कर्मठ जीवन ५७
सयाजी ऊ बा खिन: एक पावन स्मृति ५८
दान - चेतना ६२
उद्‌बोधन : विपश्यना क्या है? ६९

(जुलाई १९७५ से जून १९७६ तक)

विपश्यना-साधना: मेरे अनुभव ७५
क्या पड़ा है 'नाम' में ? ८०
शारीरिक व मानसिक बीमारी से बचने का उपाय ८४
विपश्यना ध्यान शिविर : स्वानुभव ८८
जीवन जीने की कला ८८
मानना (गुरुवचन) ८८
जानना (अनुभूति) ८९
चित्त की समता ८९

साधना ९०
तात्त्विक भूमिका ९१
पृष्ठभूमि ९१
धन्य विपश्यना! ९२
विपश्यना : जीवन जीने की कला ९६
विपश्यना साधना शिविर १०२
उद्‌बोधन : सुख बांटें १०५
विपश्यना की प्रगति हेतु शुभ-संदेश १०६
अभिनव प्रयोग! १०७
उद्‌बोधन ११२
उदान ११४
सम्यक धर्म १२०

(जुलाई १९७६ से जून १९७७ तक)

सत्य ही धर्म है। १२७
धर्म-दर्शन १३४
उदान (२) **१४१**
उदान (३) १४६
अधिष्ठान १४६
देखने मे मात्र देखना ही हो! १५२
उदान (५) १५९
आर्य-मौन १५९
अपराधी और विपश्यना १६६
सूक्ष्म दर्शन १७०
जेलें, अपराधी और विपश्यना १७६
विपश्यना की अतीत यात्रा १८२
विपश्यनाः दुःख-मुक्ति का मार्ग १८५
उद्‌बोधन १९०
विपश्यनाः दुःख-मुक्ति का मार्ग १९१
विपश्यना साहित्य १९५
विपश्यना साधना केंद्र १९८

धर्म का सार

आओ धर्म को समझें!

ठीक से समझा हुआ धर्म ही ठीक से पालन किया जा सकता है। धर्म के सार को समझेंगे तो ही उसे ग्रहण कर पायेंगे अन्यथा भीतर का सार छूट जायगा और ऊपर-ऊपर के छिलकों में ही उलझे रह जायँगे। उन्हें ही सार समझ कर धर्म मानने लगेंगे।

सार में तो सदा समानता ही रहती है। भिन्न-भिन्न तो छिल्के ही हुआ करते हैं और जहां इन छिल्कों को ही धर्म मान लिया जाता है वहां धर्म भी भिन्न-भिन्न हो ही जाते हैं। यह हिन्दुओं का धर्म - हिन्दुओं में भी सनातनी, आर्यसमाजी। यह बौद्धों का धर्म - बौद्धों में भी महायानी, हीनयानी। यह जैनियों का धर्म - जैनियों में भी दिगम्बर, श्वेताम्बर। यह ईसाइयों का धर्म - इसाइयों में भी कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट। यह मुसलमानों का धर्म - मुसलमानों में भी शिया, सुन्नी आदि आदि। धर्म भिन्न-भिन्न ही नहीं परस्पर विरोधी भी। निस्सार छिलकों को महत्त्व दिए जाने के कारण ही ये विभिन्नताएं और इन विभिन्नताओं को लेकर ये पारस्परिक विरोध उत्पन्न हो जाते हैं।

कोई चोटी रखे हुए है, कोई दाढ़ी। चोटी मोटी है या पतली? दाढ़ी मुंडा मूंछवाली या भरी मूछवाली? कोई सिर के बाल बढ़ाए हुए है – बाल खूब सजे सँवरे हैं या रूखे-सूखे जटा-जटिल? कोई सिर मुँडाए हुए है तो वह भी उस्तरे से या चिमटी से? किसी ने कान छिदवा रखे हैं तो उनमें बालियां पहनी हैं या कुण्डल या मुद्राएं? कोई तिलक लगाए हुए है तो तिलक चन्दन का है या रोली का है या भस्म का? इस आकार का है या उस आकार का? कोई माला पहने है तो वह रुद्राक्ष की है या चन्दन की या तुलसी की? बीच में लटकनवाली है या बिना लटकनवाली? यदि लटकनवाली है तो उसमें किस देवी, देवता, गुरु, आचार्य का चित्र या चिह्न लटकता है? कोई निर्वस्त्र है तो कोई वस्त्र पहने है। वस्त्र पहने है तो वह सिला है या अनसिला? इस रंग का है या उस रंग का? इस बनाव-कटाव का है या उस बनाव-कटाव का? धोती है? लुंगी है? पाजामा है? या पतलून है? कमीज है? कुर्ता है? अचकन है? या कोट है? दुपल्ली टोपी है? तुर्की टोपी है? या अंग्रेजी हैट है? कोई गले, भुजा, कलाई, पैर या अंगुलियों में डोरा बांधे है? अथवा जन्तर, ताबीज या गंडा? और उनमें कोई अंक है? या अक्षर है? या शब्द है? या मंत्र है? या यंत्र है? या तंत्र है? कोई हाथ में पात्र लिए है तो कोई करपात्री ही है। पात्र है तो मिट्टी का है? लकड़ी का है? लोहे का है? या अन्य किसी धातु का?

उद्‌बोधन : शुद्ध धर्म क्या है?

वाणी के कर्म शुद्ध रखें, शरीर के कर्म शुद्ध रखें, आजीविका शुद्ध रखें, मानसिक स्वस्थता का अभ्यास शुद्ध रखें, जागरूकता का अभ्यास शुद्ध रखें, समाधि का अभ्यास शुद्ध रखें, मानसिक चिंतन शुद्ध रखें, जीवन-जगत के प्रति दृष्टिकोण शुद्ध रखें, यही तो शुद्ध धर्म है।

मोटे-मोटे तौर पर कह सकते हैं :–

१. **दान** - अहंकार विहीन अपरिग्रह हेतु दिया गया दान शुद्ध धर्म है।

२. **शील** - सदाचार का पालन करना, हिंसा, चोरी, व्यभिचार और नशे के सेवन से विरत रहना शुद्ध धर्म है।

३. **समाधि** - मन को वश में करना, उसे एकाग्र कर वर्तमान के प्रति सजग रखने का अभ्यास शुद्ध धर्म है।

४. **प्रज्ञा** - "मैं" "मेरे" अथवा प्रिय-अप्रिय मूलक राग-द्वेष से रहित होकर हर व्यक्ति, वस्तु और स्थिति को जैसी है, वैसे यथाभूत प्रज्ञापूर्वक देखने का अभ्यास, चित्त की समता का अभ्यास शुद्ध धर्म है।

दान, शील, समाधि और प्रज्ञा के ये चारों अभ्यास सार्वजनीन हैं, सांप्रदायिकता-विहीन हैं, सर्वजनहितकारी हैं, सर्वग्राह्य हैं।

इसीलिए छिलकों से परे शुद्ध धर्म है। परंतु ऐसे शुद्ध धर्म का अभ्यास तो हम करें नहीं और चाहें भी कि हम धर्मवान हों और उससे भी अधिक यह चाहें कि लोग हमें धर्मवान समझें तो धर्म के नाम पर विज्ञापनबाजी ही करने लगते हैं। नाना प्रकार के भेष बनाते हैं, नाना प्रकार के थोथे बाह्याचार करते हैं, नाना प्रकार के दार्शनिक वाद-विवाद करते हैं, वाणी-विलास और बुद्धि-विलास करते हैं। और इस प्रकार आत्म-प्रवंचना व जग-प्रवंचना के जंजाल में बुरी तरह जकड़ते जाते हैं। न आत्महित सधता है न परहित।

आत्महित और परहित के लिए शुद्ध धर्म का जीवन जीना अनिवार्य है। शुद्ध धर्म का जीवन जीने के लिए धर्म की शुद्धता को जानना अनिवार्य है। धान को भूसे से अलग करना, सार को छिलके से अलग करना अनिवार्य है। सार को देखना सीखेंगे तो ही सार ग्रहण किया जा सकेगा।

शुद्ध धर्म का सार नहीं ग्रहण करेंगे तो द्वेष, द्रोह, दौर्मनस्य, दुराग्रह, अभिनिवेश, हठधर्मी, पक्षपात, संकीर्णता, कट्टरता, भय, आशंका, अविश्वास,

उद्‌बोधन : आत्म-संयम

आओ! आत्म-संयम सीखें! आत्म-संयम बड़ा कल्याणकारी है!

औरों को अनुशासित करने के पहले स्वयं अपने आपको शासित करें, अपने आपको संयमित करें। औरों को जीतने के पहले अपने आपको जीतें। जिसने अपने आपको जीत लिया उसने मानों सारे जग को जीत लिया। परंतु जो अपने आपको नहीं जीत सका, वह और सबों को जीतकर भी हारा हुआ ही रह गया।

अपने आपको जीतने का नाम ही आत्म-संयम है। आत्म-संयम होगा तो आत्मबल बढ़ेगा, आत्म-पुरुषार्थ बढ़ेगा। आत्मबल और आत्मपुरुषार्थ से ही सच्चा आत्महित सधेगा। आत्महित साधने पर ही परहित सध सकेगा। अपना भला नहीं कर सकेंगे तो औरों का क्या भला कर पायँगे? जो स्वयं अंधा है, वह औरों को क्या रास्ता बता पायगा? जो स्वयं लंगड़ा है वह औरों को क्या सहारा दे पायगा? अतः परहित के लिए भी और आत्महित के लिए भी, आत्म-संयम सीखें। अपने कायिक, वाचिक और मानसिक दोषों का निरीक्षण करते रहें और इन्हें ही अपना सबसे बड़ा शत्रु मानकर इनसे ही युद्ध करते रहें। जब तक एक भी दोष कायम है, तब तक उससे जूझते ही रहें। किसी भी दोष को छोटा मानकर उसकी उपेक्षा, अवहेलना न करे। उसे जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए सतत प्रयत्न करते रहें। आत्म-दोषों के उन्मूलन के लिए ही आत्म-संयम है।

साधको! आत्म-संयम सचमुच बड़ा कल्याणकारी है! बड़ा मंगलकारी है! आओ, आत्म-संयम सीखें!

---o---

'अणुव्रत'

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसीजी की धर्म पत्रिका

[विज्ञप्ति संख्या नं. २४२] से साभार उद्‌धृत

('अणुव्रत अनुशास्ता, युगप्रधान आचार्य श्री तुलसीजी के आमंत्रण पर पूज्य गुरुजी श्री सत्यनारायणजी गोयन्का ने गत २८ अप्रैल से ८ मई १९७४ तक दिल्ली में विपश्यना साधना का एक शिविर आयोजित किया था जिसमें आचार्य